ICSSR Sponsored

ISSN: 2319-9997

Journal of Nehru Gram Bharati University, 2024; Vol. 13 (2):118-123

संजीव एवं रणेन्द्र के कथा साहित्य मे आदिवासी विमर्शः एक पुनरावलोकन

प्रणव करिअप्पा एवं सव्यसाची
हिंदी विभाग
नेहरू ग्राम भारती, मानित विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उ.प्र.

Received: 01.10.2024 *Revised: 16.11.2024* *Accepted: 24.12.2024*

सारांशः
प्रस्तुत शोध आलेख मे आदिवासी विमर्श को संजीव एवं रणेन्द्र के कथा साहित्य मे तुलनात्मक ढंग से विवेचन करने का प्रयास किया गया है। इस विवेचन मे आदिवासियों की अस्मिता एवं अस्तित्व को बनाये रखने के लिए उनके हक और आत्मनिर्णय के सम्मान को विषयवस्तु बनाया गया है मानवता के नाम पर घोर अमानवीयता का तांडव हुआ है। और विकास के नाम पर अभूतपूर्व विनाश हुआ है। आदिवासी समाज का इतिहास कभी भी मुख्य भूमिका मे नही रहा या ऐसा कहे की यह सदैव मुख्य धारा से अछूता रहा है। इसलिए ऐसे लोगों के समाज एवं संस्कृति का इतिहास कथा साहित्य मे लिया गया है। प्रस्तुत आलेख आदिवासी विमर्श के इन्ही पहलुओ को विवेचित करने का प्रयास किया गया है।
मुख्य शब्दः आदिवासी, मूलवासी, जनजाति, प्राकृतिक संसाधन, भूमंडलीकरण

परिचय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के सदस्यो के रूप मे उसका इतिहास छोटे – छोटे कबीलों से प्रारम्भ होता है। आदिवासी समाज को भी प्रकृति के विभिन्न तत्वों से एवं वन मे विचरण करने वाले अन्य प्राणियों से मात्र अस्तित्व के लिए भी कठिन संघर्ष के एक अत्यंत लंबे दौर से गुजरना पड़ा। अनेक भारतीय व विदेशी समाज वैज्ञानिको और विचारको ने 'आदिवासी कौन' विषय पर विस्तार से बात करने के पश्चात आदिवासी शब्द की कुछ परिभाषाओ को अपने ग्रंथो मे उल्लेखित किया है। जिनमे प्रमुख है – डॉ0 बी०एस०गुहा, डॉ0 वी. एच. मेहता, डी. एन. मजूमदार, जी.एस.धुर्ये, ए०सी०हैडेन, गिलिन और गिलिन आदि। इन प्रसिद्ध विद्वानों के द्वारा दी गयी परिभाषाएँ उचित है। भारतीय परिप्रेक्ष मे आदिवासी की परिभाषा पं० जवाहर लाल नेहरू ने देते हुए कहा है कि– ''आखिर ये आदिवासी है कौन? एक तरह से कहा जा सकता है कि ये लोग सीमांतवादी है अर्थात जो इसके आंतरिक भाग से दूर रहते है। जिस प्रकार पहाड़ों पर रहने वाले लोग मैदानों पर रहने वाले लोगों से भिन्न होते है। मै तो मैदानों कि अपेक्षा पहाड़ों को और मैदानी लोगों कि अपेक्षा

पहाड़ी लोगों को अधिक पसंद करता हूं।'' इस प्रकार आदिवासी शब्द को विभिन्न नामों से भी जाना जाता है। जैसे – मूलवासी (इंडिजिनियस), जनजाति (ट्राइब), अनुसूचित जनजाति (सेड्यूल ट्राइब)। भारत मे इन्हें हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओ मे आदिवासी शब्द से ही जाना जाता है।

आर्थिक संसाधन

भूमंडलीकरण जिस आर्थिक परिदृश्य का निर्माण कर रहा है। उसके दूरगामी सामाजिक –सांस्कृतिक भाषाई और राजनीतिक प्रभाव भी दिखाई पड़ रहा है। इसकी मूल समस्या यह है कि उसकी आर्थिक भूख असीमित है इसलिए उसकी पैनी नजर आर्थिक संसाधनों पर रहती है उन लोगों को अपने लाभ के लिए बाजार बनाए रखने के लिए खदानों और जंगलो कि जरूरत है इसलिए सभी बड़ी बड़ी कम्पनिया जंगलों और खदानों कि ओर भागती हुई दिखायी देती है इस भयावह घटना ने आदिवासियों के जीवन को अस्त व्यस्त करके रखा है। जिससे उनकी अस्मिता खतरे मे है । समकालीन आदिवासी साहित्य आंदोलन के ऐतिहासिक – भौतिक कारण है। दो दशक पहले भारत सरकार द्वारा शुरू कि गयी आर्थिक उदारीकरण कि नीति ने बाजारवाद का रास्ता खोला। मुक्त बाजार और मुक्त व्यापार के नाम पर मुनाफे और लूट का खेल आदिवासियों के जल, जंगल और जमीन के आगे बढ़कर उनके जीवन को दांव पर लगाकर खेला जा रहा है। जिससे आदिवासी विमर्श का सवाल सहज ही उत्पन्न हो जाता है।

आदिवासी विमर्श

आदिवासी लेखन विविधताओं से भरा पड़ा है इस साहित्य की उस तरह से कोई केंद्रीय पहचान नहीं जिस तरह से स्त्री लेखन और दलित लेखन का प्रचार है। कविता, उपन्यास, नाटक सभी प्रमुख विधियों में आदिवासी और गैर – आदिवासी रचनाकारों ने आदिवासी जीवन की प्रस्तुती की है। आदिवासी रचनाकारों ने आदिवासी विमर्श और विमर्श के साथ ही उपन्यास और कहानी विधा को प्रमुख हथियार बनाया है जब मैं आदिवासी साहित्य एक पुनरावलोकन लेखन और लेखक के बारे में जानने हेतु हिंदी की रचनाओ और रचनाकारों को देखने का प्रयास करता हूं यद्यपि मै आदिवासी लेखक नहीं हूं। समकालीन आदिवासी साहित्यकारों मे हरिराम मीणा, राम दयाल मुंडा, निर्मला पुतुल, वंदना टेटे, अनुज लुगुन, गंगा सहाय मीणा आदि प्रमुख है जो अपनी लेखनी के माध्यम से आदिवासी साहित्य को एक नई दिशा दे रहे है। हिंदी उपन्यासकारों ने वैसे तो बहुत सी रचना की है जिसमे प्रमुख है संजीव के उपन्यास 'सावधान नीचे आग है' (1986) धार (1990) पांव तले की डूब (1995) और संजीव की प्रतिनिधि कहानियाँ (2022), इसी प्रकार रणेन्द्र के उपन्यास ग्लोबल गाँव के देवता, (2009), गायब होता देश (2014) में आदिवासी विमर्श प्रमुख रूप से विद्यमान है।

आदिवासी साहित्य

'सावधान नीचे आग है' और 'धार' मे क्रमशः बिहार और बंगाल आदिवासी इलाकों मे स्थित खदानों मे व्याप्त भ्रष्टाचार और कोयला मजदूरों के नारकीय जीवन तथा इन क्षेत्रों में निवास करने वाले आदिवासियों के शोषण के विमर्श का प्रश्न उठाया गया है। 'धार' मे तो उन्होने मजदूरों को अपनी सहकारी खदान 'जनखदान'

का विकल्प भी पेश किया है। यह विकल्प बहुत कुछ किताबी महसूस होता है। धार की अतिरिक्त विशिष्टा है उपन्यास की नायिका मैना जो प्रेमचन्द्र के गोदान की धनिया और एमिल जोला के 'जर्मिनल' की माहेदी की दुर्धर्ष नायिकाओ की परंपरा की अगली और अधुनातन कड़ी है ।

मैना अपने संघर्ष और साहस से प्रभावित करती है किन्तु उसके चरित्र मे विकास की संभावना नही है। कुल मिलाकर देखा जाए तो संजीव खदान मजदूरों और आदिवासियों के शोषण का चित्र तो उभार सके है जिससे आदिवासी विमर्श को और विस्तृत मंच प्राप्त हुआ है हालांकि अभी भी कुछ आधारभूत एवं प्रभावी समाधान प्रस्तुत किए जाने बाकी है। 'धार' उपन्यास का शीर्षक अरुण कमल की कविता से लिया गया है और इसकी कहानी सच्ची घटना पर आधारित है । यह घटना 1979 से 1982 के बीच संथाल परगना के देवघर सब डिविसनल के चित्रा कोयला क्षेत्र के सहारजोड़ी नामक स्थान मे घटी थी। जहा 'जन मुक्ति मोर्चा' नामक एक क्षेत्रीय संगठन के नेतृत्व मे एक कोयला खदान शुरू किया गया था जिसका प्रबंधन और संचालन खदान मे काम करने वाले मजदूर खुद करते थे इसके अलावा वहा प्रबन्धन कार्यालय, स्कूल, अस्पताल, प्रौढ़ शिक्षा केंद्र और शिशुपालन केंद्र भी खोला गया था बाद मे सरकारी हस्तक्षेप से इस खदान को नष्ट कर दिया जाता है। जो एक महान त्रासद की घटना है। देश मे करोड़ों लोग बेरोजगार है जिन्हे सरकार और व्यवस्थापक रोजगार नही दे रही है। ऐसी हालत मे एक जनसंगठन के नेतृत्व मे एक हजार से भी ज्यादा स्त्री – पुरुषो ने जिसमे ज्यादातर आदिवासी थे, एक ही झटके में सरकार ने सब को बेरोजगार बना दिया जिससे उनका अस्तित्व खतरे मे पड़ गया।

'पाँव तले की दूब' कथावस्तु छोटा नागपुर के पठारी इलाके का डोकरी ग्रामीण अंचल है। सुदीप्त इस ग्रामीण अंचल मे एन.टी.पी.सी. में इंजीनियर बनकर आते है। वह जनांदोलन से जुड़े एक लेखक भी है , वह इस अंचल की मानसिक जड़ता को दूर करने के लिए प्रयासरत है किन्तु वहाँ के अनेक प्रकार अंतर्विरोध के चलते वे सफल नहीं हो पाते है इस घटना मे असफल होने के बाद वह आत्महत्या कर लेते है। समकालीन जीवन की शायद यही सच्चाई थी क्योकि सही रास्ते पर चलते अंततः आदिवासियों एवं सत्ता के द्वारा तिरस्कृत और बहिस्कृत होने के लिए अभिशप्त है जैसे की अंडमान मे जारबा जनजाति पर विदेशी नागरिकों द्वारा किया गया अमानुसिक अत्याचार जो समाचारों मे भी प्रमुखता से उस समय छाया रहा।

संजीव की प्रतिनिधि कहानियाँ 'संजीवनी' नाम से भी जाना जाता है इस कहानी मे एक गरीब आदिवासी संजीव का जीवन और संघर्ष चित्रित किया गया है। संजीव एक कठिन जीवन जीता है लेकिन उसकी सच्चाई और ईमानदारी उसकी सबसे बड़ी ताकत होती है। यह कहानी संजीव के माध्यम से संघर्ष, ईमानदारी और आत्म – संयम की महत्वपूर्णता को उजागर करती है और एक प्रेरणादायक संदेश देती है कि कठिनाइयों के बावजूद अगर इंसान मेहनत और लगन से काम करे तो वह सफलता प्राप्त कर सकता है।

भूमंडलीकरण

भूमंडलीकरण से प्रवाहित वर्तमान और उत्तराधुनिक परिवेश मे विकास के अंतर्विरोध और उससे प्रभावित आम लोगों के जीवन यथार्थ को व्यक्त करने के लिए

झारखंड के कीकट प्रदेश के बिरवे जिले के आदिवासीयों को केंद्र मे रखकर रणेन्द्र ने अपने उपन्यास 'ग्लोबल गाँव के देवता' लिखा है। इस देश कि व्यवस्था ऐसी है कि सत्ता के दलाल अपने ही देश के लोगों पर अत्याचार का अधिकार पा जाते है । लेखक ने इस व्यवस्था के छद्दम को दिखाकर विकास की वास्तविक स्थिति और उसमे पिसते आम आदमी की विवशता को भली – भाति दिखाया गया है। साथ ही यह एक ऐसा उपन्यास है जिसमे भारत के विशेष रूप से झारखंड के एक आदिवासी समुदाय को अपने अस्तित्व, आत्मसम्मान और अस्मिता की रक्षा के लिए लंबे संघर्ष और लगातार मिटते जाने की प्रक्रिया का सवेदनशील चित्रण है।

आदिवासी समुदायों पर लिखते समय उपन्यासकार का एक काम आदिवासियों के जीवन के यथार्थ को समग्रता के साथ समझना है तो दूसरा काम उनके बारे मे प्रचलित और प्रचारित मिथकों के प्रभाव से मुक्त होकर आदिवासियों के जीवन के इतिहास को व्यक्त करना है। 'ग्लोबल गाँव के देवता' के लेखक रणेन्द्र ने ये दोनों काम किये है। इस उपन्यास के आरंभ मे ही लेखक का पहला परिचय एक असुर व्यक्ति से होता है जिसका नाम लालचन्द्र असुर है उस सुदर्शन व्यक्ति को देखकर रणेन्द्र जी चकित है क्योकि असुरों के बारे मे प्रचलित कथाओ के आधार पर उनके संबंध मे जो चित्र लेखक के मन मे था उससे एकदम विपरीत है लालचन्द्र असुर। यह व्यक्ति मैदानी व्यक्तियों की तरह ही है। इसलिए लेखक सोचता है – ''सुना तो था कि यह इलाका असुरों का है, किन्तु असुरों के बारे मे मेरी धारणा थी कि खूब लंबे – चौड़े, काले – कलूटे, भयानक दांत–वांत निकले हुए, माथे पर सींग–वींग लगे हुए होंगे। लेकिन लालचन्द्र को देखकर सब उलट– पुलट हो रहा था।'' इस तरह से असुरों के बारे मे फैली हुई धारणा को यह उपन्यास तोड़ता है

इस उपन्यास में ग्लोबल गाँव के दो देवता है। पहला है विदेशी वेदांग, ग्लोबल गाँव का यह देवता। कम्पनी है देशी पर नाम विदेशी। दूसरा देवता है टाटा, जिसने असुरों के लोहा गलान और औजार बनाने के हुनर का अंत कर दिया है। इसलिए असुर मानते है कि टाटा कम्पनी ने उसका बड़ा विनाश किया है वह असुर जाति के इतिहास की बड़ी हार है। उपन्यासकार की मूल मान्यता है कि असुरों के विरुद्ध जो लड़ाई वैदिक युग में शुरू हुयी थी, हजार– हजार इंद्र जिसे अंजाम नहीं दे सके थे, ग्लोबल गाँव के देवता ने वह मुकाम पा लिया है असुर विरिजिया, विरहोर – कोरबा आदि जाति आदिवासी सब मुख्य धारा में शामिल होने ही वाले हैं। मुख्यधारा की लहरें चाँद छूने को बेताब थी। वह लहराती – इठलाती राज्यों की राजधानियों से होती वाया दिल्ली, वाशिगटन डीसी की ओर दौड़ी जा रही है।'' यह वह मूल खतरा है, जो हमारे समाज को नये सिरे से एक नये प्रकार की गुलामी की ओर धकेल रहा है। यह गुलामी कंवल राजनीतिक और आर्थिक ही नहीं वैचारिक भी है। ''ग्लोबल गांव के देवता'' के कथाकार ने इसी ओर संकेत किया है।

आर्थिक स्रोत पर एकाधिकार जमाने के लिए शक्तिशाली लोग साम–दाम–दंड भेद अपनाने से पीछे नहीं हटते हैं। जमीन के एक टुकड़े के लिए असुर लालचन दा के चाचा की हत्या सिर काटकर कर दी जाती है। ''देवी धाम में सिर वैसे ही पड़ा था। दोन खेत से धड़ को खटिया पर लादकर ले आया गया था। कोयला बीघा थाना हाजिर था। फुसफुसाहट थी कि गोनू सिंह के खानदान का काम है। लम्बे चौड़े खानदान के भय से कोई मुँह नहीं खोलना चाहता। इस तरह से पूरे इलाके मे

दहशत छायी हुयी है कि हत्यारे का पता होते हुए भी किसी में इतनी हिम्मत नहीं है कि कोई बोल सकें। जिसके पास बाजू बल हो और धन की ताकत साथ हो, तो वह जिस ढंग से चाहे काम निकालता है। इसका उदाहरण हम वर्तमान जीवन में भी देख सकते हैं।

उपन्यास के प्रसंग में दिखाया गया है की ''भौरा घाट स्कूल आदिम जाति परिवार की बेटियों के लिए खोला गया था, किन्तु उसमें पढ़ने वाली असुर–बिरिजिया बच्चियों की सख्या दस प्रतिशत से ज्यादा नहीं थी। ज्यादातर बच्चियां हेडमिस्ट्रेस और टीचर्स के गाँव की और उनकी जाति उराव – खड़िया, खेकार परिवार की थी।'' यानी जिसके लिए यह स्कूल खोला गया था उन लोगों का स्कूल तक पहुंचना भी आसान नहीं था। इस तरह से हम देखते हैं कि विकास के नाम पर चलायी जा रही विभिन्न योजनाएं इसी भ्रष्ट तंत्र का शिकार हैं।

प्राकृतिक संसाधन

प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करने वालों को केवल धन नजर आता है, इसलिए जिस जमीन पर आदिवासियों का अधिकार होता है वहां से उनको बेदखल करने की योजना ये धनवान देवता बनने लगते है। ''सामान्य तौर पर इन आकाशचारी देवताओं को जब अपने आकाश मार्ग से या सेटेलाइ की आंखों से छत्तीसगढ़, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, झारखंड आदि राज्यों की खनिज सम्पदा जंगल और अन्य संसाधन दिखते हैं तो उन्हें लगता है कि अरे इन पर तो हमारा हक है। यानी योजनाबद्ध तरीके से जन–जातियों की जमीन पर काबिज होने के कार्यक्रम चलने लगते हैं।

यह दुःखद बात है कि जो लोग अपनी अस्मिता को बनाये रखने के लिए अपने अधिकारों का मांग करते हुए संघर्ष करते है तो वे मारे जाते हैं और उन्हें नक्सली करार दे दिया जाता है। अखबार के तीसरे पृस्ठ पर ..... हत्याकांड की खबर इस प्रकार छपती है – ''पाथरपाट मे हुए पुलिस मुतभेड़ मे छः नक्सली मारे गए। मारे गए नक्सलियों मे कुख्यात एरिया कमांडर लालचन्द्र भी सामिल। फिर लालचन्द्र के नृशस कारनामे का विवरण। इस तरह नक्सलवाद या आतंकवाद के बहाने हाशिए के आईमियों पर सत्ता किस तरह अत्याचार करती है। इस घटना का उदाहरण हम 'चक्रव्यूह' फिल्म मे भी स्पस्ट तौर से देख और समझ सकते है। संरचना के लिहाज से ग्लोबल गाँव का देवता ऐसा उपन्यास है जिसमे आख्यान और कविता का कथा– दृष्टि और काव्य संवेदना का दुर्लभ सामंजस्य है ऐसा इसलिए भी है कि उपन्यासकार रणेन्द्र कवि भी है। इस उपन्यास मे पांच कविताएं है जो वे कथा को गति देती है और प्रभाव की गहराइया भी। इसलिए यह उपन्यास भाषा एवं संरचना आदि कई दृष्टियां से भी बहुत ही सुगठित है।

निष्कर्ष

अततः हम कह सकते हैं कि भूमंडलीकरण की इस अंधी दौड़ में शान्ति के नाम पर भयावह युद्ध हुए हैं, स्वतन्त्रता के नाम पर भीषण दमन हुआ है, मानवता के नाम पर घोर अमानवीयता का तांडव हुआ है और विकास के नाम पर अभूतपूर्व विनाश हुआ है। इसलिए आदिवासियों की अस्मिता और अस्तित्व को बनाये रखने के लिए उनके हक और आत्मनिर्णय का सम्मान करना होगा। जो लोकतन्त्र के लिए

जरुरी है। ऐसे लोग समाज के अछूत इतिहास के भी अछूत होते हैं। वे समाज से बहिष्कृत होते है इसलिए इतिहास से भी बहिस्कृत रहते है । ऐसे लोगों के समाज और संस्कृति का इतिहास उपन्यास में लिखा जाता है। अमेरिका की अश्वेत कथा लेखिका टोनी मॉरिसन कहती है ''इतिहास जहां मौन होता है वहीं साहित्य मुखर होता है। मैं जो कुछ लिखती हूँ वह साहित्य भी है और इतिहास भी। हम ऐसे देश में रहते हैं जहाँ अतीत मिटाया जाता है और भविष्य निर्दोष हुआ करता है। इस तरह से यह उपन्यास टोनी मॉरिशन की कथा दृष्टि की परम्परा का उपन्यास है, जिसमें असुर समुदाय के जीवन और संस्कृति के अदृश्य इतिहास को बड़ी संवेदनशीलता के रूप में लिखा हुआ आख्यान है।

संदर्भः–

1. ग्लोबल गाँव के देवता : रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, दूसरा संस्करण, 2010. पृ० 11
2. ग्लोबल गाँव के देवता : रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, दूसरा संस्करण, 2010. पृ०– 32
3. ग्लोबल गाँव के देवता : रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, दूसरा संस्करण, 2010. पृ०– 88
4. ग्लोबल गाँव के देवता : रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, दूसरा संस्करण, 2010 पृ०– 93
5. ग्लोबल गाँव के देवता : रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, दूसरा संस्करण, 2010 पृ०– 100
6. हिन्दी का गद्य साहित्य : डॉ० रामचन्द्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 2014 पृ० 199
7. झारखंड के आदिवासियों के बीच एक एक्टीविस्ट के नोट्स : वीर भारत तलवार, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2008 पृ० – 435
8. तदभव : विशेष प्रस्तुति दलित वैचारिकी की दिशाए : सं० अखिलेश, पृ० 125
9. उपन्यास और लोकतन्त्र : मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ० 208.
10. धार : संजीव, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड 1990
11. पाँव तले की दूब, संजीव
12. सावधान! नीचे आग है, संजीव
13. प्रतिनिधि कहानियाँ, संजीव
14. संजीव का कथा साहित्य और आदिवासी विमर्श, डॉ० यशपाल सिंह राठौर, वान्या पब्लिकेशन, 2022

Disclaimer/Publisher's Note:

The statements, opinions and data contained in all publications are solely those of the individual author(s) and contributor(s) and not of JNGBU and/or the editor(s). JNGBU and/or the editor(s) disclaim responsibility for any injury to people or property resulting from any ideas, methods, instructions or products referred to in the content.